बृहस्पति के उपग्रह, देशांतर रेखाएं और प्रकाश की गति

माधव केलकर

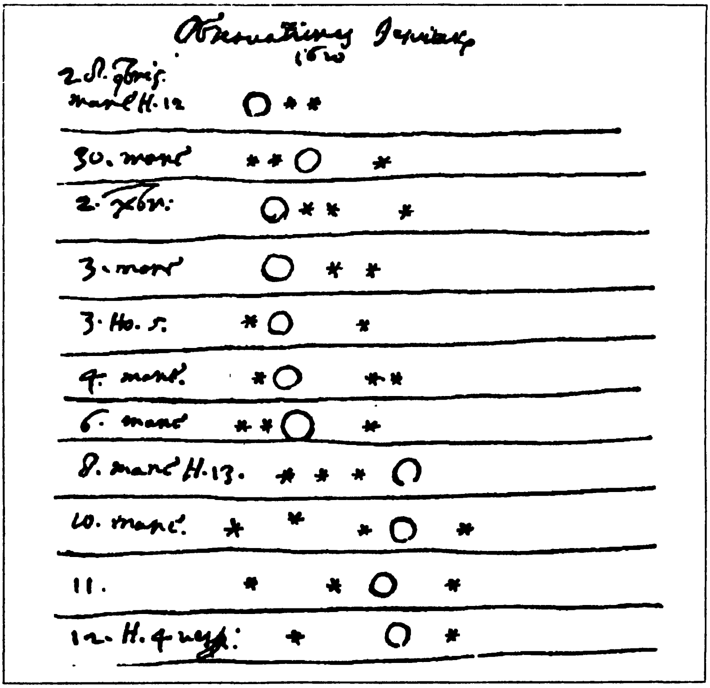

गैलीलियो की नोट बुक का एक पेज जिसमें उसने 28 नवंबर 1620 से बृहस्पति के उपग्रहों के अवलोकन लिखे थे।

16वीं और 17वीं सदी खासी उथल-पुथल वाली सदी रही है। ढेर सारी समुद्री यात्राएं, नए देशों की खोज, संसाधनों की लूट, उपनिवेशों की स्थापना आदि-आदि। इन सब के बीच वैज्ञानिक हलचल भी शायद उतनी ही तीव्र थी।

इस उथल-पुथल भरी दुनिया में कुछ लोग परेशान थे प्रकाश की गति को लेकर। उस समय तक यह तय नहीं हो सका था कि प्रकाश की गति की कोई 'सीमा है' या 'प्रकाश अनंत गति' से गमन करता है। उस दौर में उपलब्ध भौतिक उपकरणों की सीमाओं को देखते हुए इस विवाद या सवाल को सुलझाने के लिए तरह-तरह के प्रयोग सुझाए जा रहे थे, नाना प्रकार की परिकल्पनाएं प्रस्तुत की जा रही थीं। उस समय तक वैज्ञानिक पत्रिकाओं की शुरुआत अभी हुई नहीं थी इसलिए खोजबीन में जुटे वैज्ञानिक या तो एक-दूसरे से मिलकर चर्चाएं करते थे, अपने परिणाम एक-दूसरे से बांटते थे; या फिर पत्र व्यवहार के माध्यम से इस प्रकार का आदान-प्रदान करते थे। इसी तरह का पत्र व्यवहार सन् 1634 में मशहूर विचारक रेने देकार्ते और उसके डच वैज्ञानिक मित्र आइज़ैक बेकमेन के बीच प्रकाश की गति को लेकर चल रहा था।

गैलीलियो द्वारा सुझाए गए प्रयोग जैसा ही एक प्रयोग बेकमेन ने सुझाया था। एक आदमी एक बड़े आइने से काफी दूर, हाथ में एक लालटेन लेकर खड़ा हो जाए। अब वह लालटेन को हिलाए और आइने में लालटेन का प्रतिबिंब देखे। अगर उस व्यक्ति को अपने लालटेन हिलाने और आइने में प्रतिबिंब के हिलने के बीच समयांतर का आभास होता है तो इस बात का प्रमाण मिल जाएगा कि प्रकाश की गति की कोई सीमा पक्के तौर पर है।

बेकमेन का मानना था कि 250 कदमों की दूरी से हाथ की लालटेन हिलाने और आइने में लालटेन के हिलने के बीच दिल की दो धड़कनों जितना विलंब महसूस होना चाहिए।

इस संबंध में देकार्ते ने बेकमेन को लिखा, "तुम्हें इस प्रयोग पर इतना भरोसा था कि तुमने यह तक कह दिया कि अगर प्रयोग करने वाले को अपना हाथ हिलाने और दर्पण में प्रतिबिंब को हिलता देखने के बीच समयांतर नहीं महसूस हुआ तो तुम्हारी पढ़ाई का कोई अर्थ ही नहीं रह जाएगा। जबकि मैंने, उसके विरुद्ध, कहा था कि अगर ऐसा समयांतर महसूस किया गया तो इससे मेरी पूरी पढ़ाई अर्थहीन हो जाएगी।"

बिना प्रयोग किए देकार्ते को इस प्रयोग के परिणाम के बारे में इतना विश्वास कैसे था। उसके खत से यह भी समझ में आता है, "उसके अगले

दिन इस विवाद को निपटाने के लिए और ताकि तुम इस पर अपना वक्त बर्बाद न करो, मैंने तुम्हें याद दिलाया कि एक और प्रयोग है जो बहुत से लोगों ने कई बार किया है और जिससे यह स्पष्ट प्रमाणित हो जाता है कि किसी प्रकाशित पिंड से आंख तक पहुंचने में प्रकाश को कोई समय नहीं लगता......."

इस समय अंतराल की चर्चा करते हुए देकार्ते लिखते हैं, "तत्पश्चात मैंने कहा कि यह समय अंतराल जो तुम्हारे प्रयोग में महसूस नहीं हो सकता, मेरे द्वारा सुझाए प्रयोग में तो इसका पता चल ही जाएगा। अगर यह माना जाए कि चंद्रमा पृथ्वी से पृथ्वी की 50 त्रिज्याओं जितनी दूरी पर है. . . . तो गणनाएं दिखाती हैं कि प्रकाश को पृथ्वी और चंद्रमा के बीच की दुगनी दूरी तय करने के लिए कम-से-कम एक घंटे का समय लगेगा।"

देकार्ते का सुझाव था कि चंद्र ग्रहण या सूर्य ग्रहण के द्वारा यह पता किया जा सकता है कि प्रकाश की गति 'अनंत' है या 'सीमाबद्ध' है। उसका कहना था कि ग्रहण की गणनाओं से यह पता चल जाता है कि ठीक किस समय धरती, सूरज और चांद के बीच में आएगी; और यदि प्रकाश की गति अनंत नहीं है तो आकाश में ग्रहण इन गणनाओं की तुलना में कुछ देर से दिखाई देगा। लेकिन उस समय तक ग्रहण को लेकर इस तरह का कोई विलंब देखने में नहीं आया था और इसीलिए देकार्ते ने यह माना कि प्रकाश की गति अनंत है।

हालांकि देकार्ते का विलंब वाला तर्क सही था लेकिन निष्कर्ष गलत। आज की तारीख में हम प्रकाश की गति जानते हैं इसलिए यह भी जानते हैं कि यह अंतर बेहद सूक्ष्म है, जिसे 17वीं सदी में महसूस कर पाना संभव नहीं था। लेकिन एक और मायने में देकार्ते सही निकला – प्रकाश की गति के विवाद के हल की खोज धरती पर किए जा रहे प्रयोगों से नहीं बल्कि खगोलीय प्रयोग शाला में करनी होगी। और यहीं से शुरू होता है हमारा आगे का किस्सा।

खगोलीय प्रयोग शाला और . . .

प्रकाश की गति की खोज की दूसरी कड़ी है बृहस्पति के उपग्रह। सन् 1610 में गैलीलियो ने अपनी दूरबीन से बृहस्पति ग्रह को देखा तो साथ में उसे कुछ और चमकीले पिंड दिखे जिन्हें उसने तारे समझा। अगली शाम से लगातार उसने कई दिन तक बृहस्पति का अवलोकन किया तो स्पष्ट हुआ कि उसने न केवल बृहस्पति को देखा है बल्कि साथ ही उसके चार उपग्रह भी हैं।

लगातार कुछ महीनों तक अवलोकन के बाद इनके नाम इवो, यूरोपा, गेनीमिड और केलिस्टो दिए

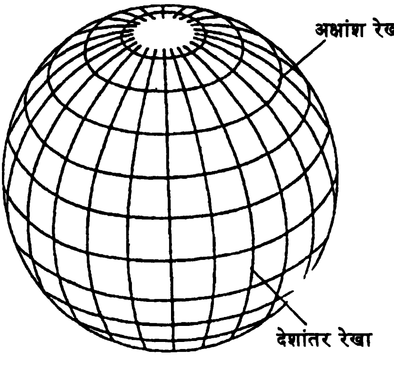

चित्र: 1

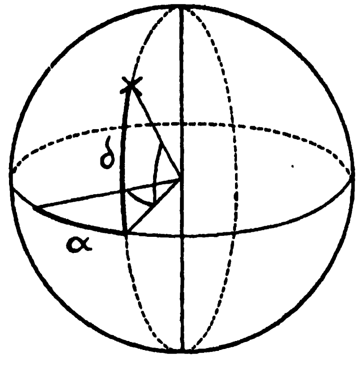
चित्र: 2

भूमध्य रेखा व किसी स्थान के बीच पृथ्वी के केन्द्र पर बनने वाला कोण उस स्थान का अक्षांश होता है। किसी भी जगह का अक्षांश पता करने के लिए ध्रुव तारे व क्षैतिज के बीच बनने वाले कोण को नापते हैं – जितना यह कोण, उतना ही उस स्थान का अक्षांश। ग्लोब पर उत्तर-दक्षिण ध्रुव के बीच प्रदर्शित रेखाएं देशांतर रेखाएं होती हैं। किसी स्थान विशेष का देशांतर उस जगह की शून्य डिग्री देशांतर से कोणीय दूरी दर्शाता है। चित्र-2 से स्पष्ट होता है कि ये दोनों पृथ्वी के केन्द्र पर बनने वाले कोणों को ही बता रहे हैं।

गए; बढ़ती दूरी के क्रम में यानी सबसे पास का इवो और सबसे दूरस्थ केलिस्टो। ये चारों उपग्रह बृहस्पति का एक चक्कर पूरा करने में क्रमशः 42.5, 85.3, 177.7 और 400.5 घंटे का समय लेते हैं।

. . . . देशांतर रेखाएं

एक बार हम फिर 16वीं और 17वीं सदी की ओर मुड़ें। यूरोप की सभी प्रमुख ताकतें एक प्रमुख सवाल से जूझ रही थीं, कि समुद्री यात्राओं के दौरान किसी स्थान के देशांतर का किस तरह पता लगाया जाए? 17वीं सदी के अंतिम हिस्से में 'विज्ञान' व्यवस्थित होने लगा था। पहले-पहली वैज्ञानिक पत्रिकाएं शुरू हो गई थीं। कई वैज्ञानिक संस्थानों की शुरुआती नींव रखी जा चुकी थी। साथ ही उन पर यह दबाव भी था कि उस समय की 'व्यावहारिक समस्याओं' का हल जल्द-से-जल्द खोजा जाए। बढ़ते समुद्री यातायात के कारण पृथ्वी पर कहीं भी अपनी स्थिति पता कर पाना उस समय की एक प्रमुख समस्या थी।

अक्षांश पता करने का तरीका तो

फिर भी आसान था और ईसा पूर्व तीसरी सदी से इस्तेमाल किया जाता रहा था। ठीक दोपहर को आसमान में सूरज की स्थिति नाप कर या रात में ध्रुव तारे की स्थिति पता करके। लेकिन देशांतर पता करना खासा कठिन काम था जबकि सिद्धांततः उसका हल भी मालूम था; देशांतर रेखाओं का संबंध स्थानीय समय से होता है और किसी जगह के स्थानीय समय और किसी विशेष देशांतर के समय में अंतर से उस जगह का देशांतर पता चल सकता है। परन्तु एकदम सही समय नापने वाले यंत्रों/घड़ियों के अभाव में यह तरीका बहुत भरोसेमंद नहीं रह जाता था।

तीन तरीके

17वीं सदी तक देशांतर मालूम करने की दो-तीन प्रमुख विधियां प्रचलन में थीं। पहली विधि में चुंबकीय सुई की मदद से भौगोलिक उत्तर से चुंबकीय उत्तर का विचलन कोण नापकर, और कई बार साथ ही चुंबकीय नमन कोण नापकर, देशांतर निकाले जाते थे। इसके लिए धरती की चुंबकीय बल रेखाओं का समुचित ज्ञान होना ज़रूरी था। परन्तु जब समझ में आने लगा कि धरती के चुंबकीय क्षेत्र में लगातार बदलाव होते रहते हैं, तो इस तरीके को त्याग दिया गया।

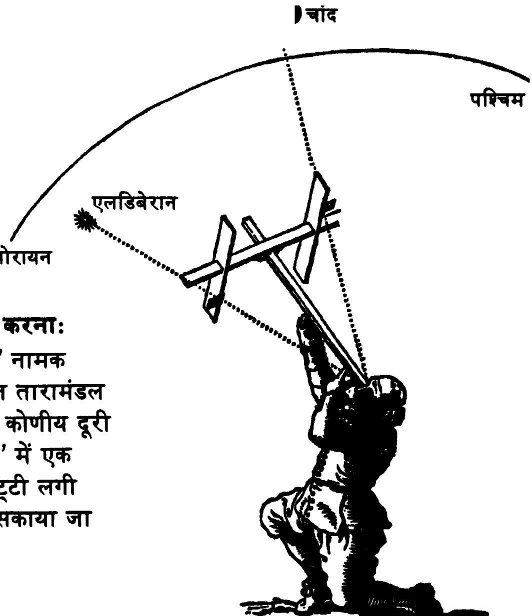

चांद और तारे की दूरी पता करना: एक खगोलविद 'जेकब स्टाफ' नामक उपकरण से चांद की ओरायन तारामंडल में स्थित एलडिबेरान तारे से कोणीय दूरी निकाल रहा है। 'जेकब स्टाफ' में एक लंबी पट्टी पर एक आड़ी पट्टी लगी होती है जिसे आगे-पीछे खिसकाया जा सकता है।

दूसरी विधि आकाशीय पिंडों की स्थितियों पर आधारित थी। किसी स्थान विशेष के देशांतर का समय मालूम हो तो उसकी स्थानीय समय से तुलना कर अपना देशांतर पता किया जा सकता है। देशांतर विशेष पर समय पता करने के लिए आकाशीय पिंड़ों में से चांद को चुना गया। चांद को लगने वाले ग्रहण का समय, चांद के पीछे किसी तारे के छुप जाने का समय या चांद की किसी तारे से कोणीय दूरी आदि घटनाएं समय पता करने के लिए इस्तेमाल की जाती थीं।यदि इन घटनाओं की अलग-अलग स्थान के हिसाब से एक विस्तृत सारणी बनाई जाए तो यात्रा के दौरान इस सारणी का इस्तेमाल करके समयांतर के आधार पर देशांतर मालूम किया जा सकता है। वैसे चांद के साथ पहली दो घटनाएं कभी-कभार ही होती हैं, इसलिए चांद से किसी निश्चित तारे की कोणीय दूरी को नापने वाली विधि ही ज़्यादा प्रचलित हुई। बृहस्पति के ग्रहों के ग्रहणों की सारणियों का उपयोग भी इसी तरह किया जाता था, खास करके ज़मीन पर स्थित किसी स्थान का देशांतर पता करने के लिए।

तीसरे तरीके में एक व्यक्ति जहाज़ की यात्रा प्रारंभ होने वाले स्थान के स्थानीय समय के अनुसार घड़ी को सेट करता है। जहां भी देशांतर पता करना हो वहां पर खगोलीय पिंडों के ज़रिए स्थानीय समय का निर्धारण किया जाता है; और फिर इन दोनों समय के अंतराल और शुरुआती स्थान के देशांतर के आधार पर नई जगह का देशांतर पता किया जा सकता है; यह जानते हुए कि किन्हीं भी दो देशांतर (यानी एक डिग्री) के बीच समय का अंतर चार मिनट का होता है। परन्तु तब तक समय मापने के यंत्र इतने विकसित नहीं थे कि इस तरीके का कारगर रूप से इस्तेमाल हो सके।

17वीं सदी में देशांतर ठीक-ठीक मालूम करना इतना महत्वपूर्ण बन गया था कि यूरोप के कई देशों ने सही देशांतर पता करने का तरीका ढूंढने के लिए ढेर सारे इनामों की घोषणा की थी। स्पेन, नीदरलैंड, फ्रांस और इंग्लैंड – हर देश ने इनाम घोषित किए थे। इंग्लैंड ने 20 हज़ार पौंड जैसी आकर्षक रकम बतौर इनाम रखी थी। इन इनामों की वजह से भी उस समय के कई वैज्ञानिक और कई सारे शौकिया लोग इस समस्या को सुलझाने की कोशिश में जुट गए थे।

कई लोग दोलक में सुधार कर समय मापने के बेहतर तरीके विकसित करने में लग गए, तो कइयों को विश्वास था कि इसका बेहतर हल खगोली पिंडों के अवलोकन से ही पता चल सकता है। इसी दौरान किसी ने सुझाया कि बृहस्पति के उपग्रहों का इस्तेमाल भी

देशांतर मालूम करने में किया जा सकता है। चारों उपग्रहों का अवलोकन करने पर पता चला कि बृहस्पति से सबसे पास का उपग्रह इवो लगभग 42.5 घंटे में बृहस्पति का एक चक्कर पूरा करता है। यह हर 42.5 घंटे बाद बृहस्पति के छाया क्षेत्र में प्रवेश करता है और धरती से दिखाई देना बंद हो जाता है, फिर कुछ समय के बा छाया क्षेत्र से बाहर निकल आता है और फिर से दिखाई देने लगता है; यानी इसे बहुत ही कम अंतराल में नियमित रूप से ग्रहण लगता है।

ग्रहण जैसी इस घटना को आधार बनाकर देशांतर पता करने की विधि विकसित करने के लिए ज़रूरी था कि एक ऐसी तालिका बनाई जाए जिसमें धरती के कई सारे इलाकों के लिए स्थानीय समय के अनुसार बृहस्पति के इस उपग्रह को ग्रहण लगने और छूटने की जानकारी दी गई हो। विस्तृत तालिकाएं बनाने के इस काम में पेरिस वेधशाला के दो वैज्ञानिक जीन पिकार्ड और जी. डी. कासिनी जुट गए। उन्हीं दिनों फ्रांस और डेनमार्क ने मिलकर काम करने का एक प्रोजेक्ट बनाया जिसमें 'इवो' के ग्रहण पर पेरिस के साथ-साथ डेनमार्क से भी नज़र रखने की योजना थी। इस प्रोजेक्ट के लिए पिकार्ड डेनमार्क चले आए। डेनमार्क में पिकार्ड को मदद के लिए ओल्फ रोमर नामक साथी मिला। डेनमार्क में काम करते हुए वे रोमर के काम से बेहद प्रभावित हुए और उसने रोमर को पेरिस चलने का न्यौता तक दे डाला।

अंतिम चरण

आखिरकार रोमर पेरिस आ पहुंचा और वहां वह भी बहुत सारे अन्य साथियों के साथ बृहस्पति के पहले उपग्रह इवो की ग्रहण सारणियां तैयार करने वाले प्रोजेक्ट में काम करने लगा। पेरिस वेधशाला के एक अन्य साथी फिलिप मराल्डी ने इस बात को महसूस किया कि कागज़ी गणनाओं और आकाश में उपग्रह के छाया में प्रवेश करने की नियमितता में थोड़ा फर्क है और ऐसे अंतर को 'इनइक्वालिटी' नाम दिया। उसका कहना था कि इस उपग्रह की कक्षा गोलाकार नहीं वरन् दीर्घवृत्ताकार है इस वजह से यह अंतर देखने में आ रहा है।

दूसरे अंतर के बारे में सन् 1675 में कासिनी ने सुझाया कि दूसरा फर्क संभवतः उपग्रह से हम तक प्रकाश आने में लगने वाले समय की वजह से हो सकता है। प्रकाश को धरती की कक्षा के अर्द्ध व्यास के बराबर दूरी तय करने में 10-11 मिनट का समय लगता है ऐसा उसका मानना था।

कासिनी द्वारा इतने साफतौर पर अपनी राय देने के बाद रोमर को आगे काम करने के लिए बचा ही क्या था? लेकिन न तो कासिनी ने अपनी

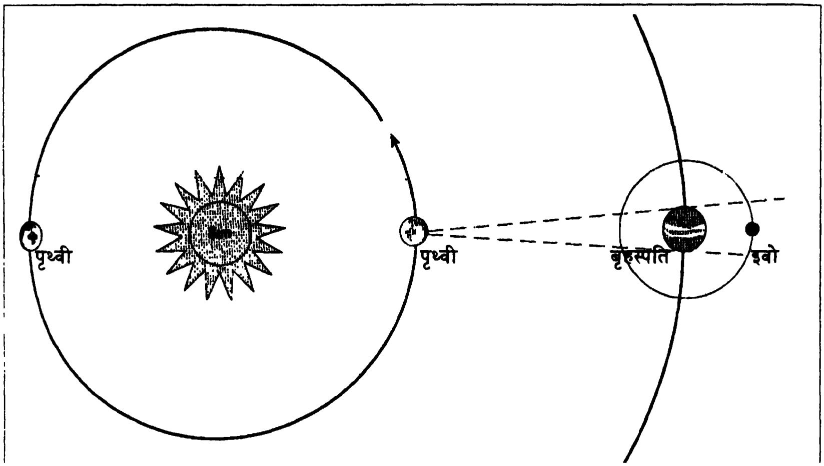

रोमर के पर्चे का अंश: "मैं बृहस्पति के पहले उपग्रह का पिछले आठ साल से अवलोकन कर रहा हूं। हर बार बृहस्पति की छाया में घुसने पर इसे ग्रहण लगता है। मैंने पाया है कि दो ग्रहणों के बीच का अंतराल बदलता रहता है। जब पृथ्वी अपनी कक्षा में घूमते हुए बृहस्पति के पास होती है तब अंतराल कम होता है और जब पृथ्वी बृहस्पति से अधिकतम दूरी पर होती है तो यह अंतराल भी अधिकतम होता है। इसका यही अर्थ निकलता है कि प्रकाश को अंतरिक्ष में से गुज़रने में समय लगता है।

प्रकाश की गति इतनी अधिक होगी कि पृथ्वी की बृहस्पति से निकटतम स्थिति की तुलना में, दूरस्थ स्थिति तक पहुंचने में उसे 22 मिनट अधिक लगते हैं। यानी कि प्रकाश को धरती से सूर्य तक की दूरी तय करने में लगभग दस मिनट लगते हैं; इसकी गति अनंत नहीं है जैसे कि माननीय देकार्ते का कहना है।"

परन्तु आज हम जानते हैं कि प्रकाश को सूर्य से धरती तक आने में लगभग 8 मिनट का समय लगता है, यानी पृथ्वी की कक्षा को पार करने में उसे 16 मिनट लगते हैं।

बात दमदार तरीके से रखी और न ही उसकी बात पर किसी का ध्यान गया। मज़ेदार बात तो यह है कि जब रोमर ने अपने अवलोकनों से इस बात की पुष्टि की तो कासिनी ने इस परिकल्पना को पूरे तौर पर ठुकरा दिया और अंत तक इस मसले पर रोमर का विरोध करता रहा।

रोमर ने अपने अवलोकनों पर आधारित एक पर्चा पेरिस की एक विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित किया। इसका अंग्रेज़ी अनुवाद कुछ समय बाद सन् 1677 में लंदन से निकलने वाली पत्रिका 'फिलोसोफिकल ट्रांज़ेक्शन्स' में

प्रकाशित हुआ।

रोमर ने अभी तक प्रकाश की गति को लेकर कोई आंकड़ा प्रस्तुत नहीं किया था लेकिन उसने स्पष्टतः यह ज़रूर कहा कि प्रकाश की गति को नापा जा सकता है। रोमर का यह अनुमान था कि प्रकाश एक सेकेंड में एक धरती व्यास बराबर दूरी तय करता है। उसके अनुसार बृहस्पति के पहले उपग्रह को लगने वाले ग्रहण के बाद जब वह दुबारा ग्रहण वाली स्थिति में पहुंचता है तब तक धरती इतनी आगे बढ़ चुकी होती है कि प्रकाश को वहां तक पहुंचने में 3.5 मिनट की देरी लगनी चाहिए। लेकिन इवो के दो ग्रहणों के बीच गणना से आ रहे समय और

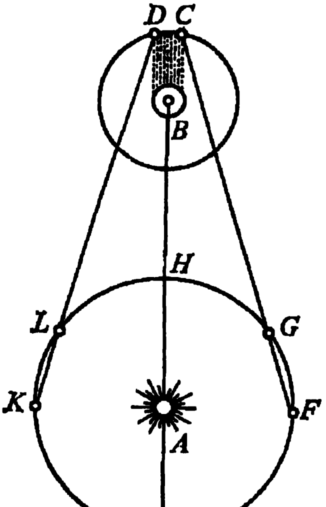

रोमर के पर्चे से चित्रः पृथ्वी 'एल' पर है जब बृहस्पति के उपग्रह 'इवो' का ग्रहण खत्म होता है और वह छाया में से 'डी' पर बाहर निकलता है। लगभग साढ़े बयालिस घंटे बाद उपग्रह को फिर से ग्रहण लगता है और जब वह छाया से बाहर निकलता है (बिंदु डी), तब तक पृथ्वी अपने कक्ष में आगे बढ़कर स्थान 'के' तक पहुंच चुकी होती है। अगर प्रकाश को 'एल-के' दूरी तय करने में समय लगता है तो 'के' से देखने पर उपग्रह को ग्रहण से बाहर निकलने अर्थात एक चक्कर पूरा कर स्थान 'डी' पर दुबारा पहुंचने में कुछ ज़्यादा समय लगता दिखेगा।

अवलोकन में कोई अंतर नहीं पाया गया। तब रोमर ने कहा कि ऐसा शायद इसलिए हो रहा है क्योंकि हम प्रकाश की गति का सही अंदाज़ नहीं लगा पाए हैं। और उसका कहना था कि भले ही दो ग्रहणों के बीच ऐसा अंतर नहीं दिख रहा परंतु कई बार ग्रहण लगने के बाद इसका अहसास करना ज़रूर संभव होगा।

यदि हम प्रकाश की गति के वास्तविक नाप पर न जाएं तो रोमर का यह काम काफी सराहनीय माना जाएगा क्योंकि यह पहला मौका था जब किसी ने प्रकाश की गति को अनंत न मानकर उसकी गति निर्धारण की सफल कोशिश की थी। प्रकाश की गति के लिए कोई स्पष्ट आंकड़ा न देने के पीछे प्रमुख कारण था कि उस समय तक धरती की कक्षा के व्यास का निर्धारण काफी हद तक स्थूल गणनाओं पर टिका हुआ था। उसने जो कहा था उसे अगर आज की जानकारी के आधार पर आंकड़ों में तब्दील करें तो उसके अनुसार प्रकाश की गति लगभग 2.14 लाख किलोमीटर प्रति सेकेंड थी।

कासिनी और पेरिस वेधशाला में मौजूद कासिनी के बहुत से रिश्तेदारों ने रोमर की इस व्याख्या को स्वीकार नहीं किया परंतु रोमर के इन अवलोकनों और व्याख्याओं को यूरोप की नामचीन हस्तियों ने सराहा जिनमें क्रिश्चियन हाइजेन, न्यूटन, जॉन फ्लेमस्टीड, जेम्स ब्रेडले, एडमंड हैली जैसे लोग शामिल थे। लेकिन पेरिस ऐकेडमी ऑफ साइंसेज़ चुप थी और कासिनी रोमर की व्याख्याओं को स्वीकार करने के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं था। यह वही कासिनी था जिसने कुछ साल पहले फिलिप मराल्डी के अवलोकनों पर टिप्पणी करते हुए प्रकाश द्वारा दूरी तय करने में लगने वाले विलंब की चर्चा की थी।

कासिनी ने अब पैंतरा बदलकर ग्रहण दिखने में लगने वाले विलंब के लिए उपग्रह की कक्षा अत्यंत अंडाकार होने तथा उपग्रह की कक्षा के अलग - अलग हिस्सों में उपग्रह की अनियमित गति के लिए कुछ अज्ञात कारण होने की बात कही। यहां तक कि रोमर के प्रकाशित अवलोकनों को भी उसने संदेहास्पद बताया। कासिनी का सबसे सशक्त तर्क था कि बृहस्पति के अन्य उपग्रहों में तो इस तरह का विलंब नहीं पाया गया है। उस समय बड़े ग्रहों के उपग्रहों की गति के सिद्धांतों और उनके परस्पर असर को लेकर जो काम चल रहा था, वह अभी अपने प्रारंभिक चरण में होने की वजह से रोमर के पास कासिनी के इस तर्क का कोई जवाब नहीं था।

रोमर के काम को पेरिस वेधशाला के साथियों द्वारा न सराहे जाने का

कारण बड़ा ही साफ था क्योंकि उनमें से बहुत से कासिनी के रिश्तेदार थे, इसलिए वे कासिनी के साथ थे। लेकिन फ्रांस में रोमर के काम को महत्वपूर्ण न मानने के कुछ और कारण भी थे। जैसे: रोमर पेरिस ऐकेडमी ऑफ साइंसेज़ का सदस्य नहीं था (उसने इस ऐकेडमी की सदस्यता विदेशी सदस्य के रूप में न्यूटन के साथ 1699 में ली)। दूसरा कारण रोमर का प्रोटेस्टेंट होना था। फ्रांस में 1598 में लागू एक एक्ट के मुताबिक फ्रांस में प्रोटेस्टेंटों की धार्मिक और नागरिक आज़ादी पर कुछ पाबंदियां लगाई गई थीं। इस वजह से भी रोमर की खोज का विरोध किया जा रहा था।

1680 आते-आते फ्रांस की इस भेदभाव मूलक नीति के कारण कई प्रोटेस्टेंट वैज्ञानिक अपने-अपने देशों को लौटने लगे थे, जिसको देखते हुए फ्रांस के सम्राट लुई-14 ने इस एक्ट को 1685 में निरस्त किया लेकिन तब तक देर हो चुकी थी। रोमर 1681 में अपने देश डेनमार्क लौट गया और वहां कोपेनहेगन में अपने काम को आगे बढ़ाता रहा।

यहां तक आते-आते प्रकाश की गति का मामला तो खत्म हो गया क्योंकि आने वाली सदियों में प्रकाश की गति का शुद्धतम मान 3×10^8 मीटर/सेकेंड निकाला गया। लेकिन आप यह ज़रूर सोच रहे होंगे कि फिर देशांतर रेखाओं की पहेली का क्या हुआ? घोषित किए गए इनाम किसी के हाथ आए क्या?

यकीन मानिए आज इंटरनेशनल डेट लाइन है, छोटे-से-छोटे देश का अपना मानक समय है; यह सभी देशांतर रेखाओं के निर्धारण की वजह से ही संभव हो पाया है। फिलहाल देशांतर रेखाओं की इस पहेली को किसी आगामी लेख के लिए मुल्तवी रखते हैं।

माधव केलकर: संदर्भ पत्रिका से संबद्ध।

यह लेख; *'द ग्रेटेस्ट स्पीड'*, एस. आर. फिलोनोविच, मीर प्रकाशन और *'द क्वेस्ट फॉर लोंगिटयूड'*, विलियम जे. एच. एंडर्यूस द्वारा संपादित, हार्वर्ड कॉलेज द्वारा प्रकाशित किताब में दी गई जानकारियों पर आधारित है।